शोध मंथन Vol. XVI No.I Jan.- Mar. 2025 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

धूमिल के काव्य का शिल्प विधान

डॉ0 उपासना दीक्षित
हिंदी विभागाध्यक्ष
इंग्राहम गर्ल्स डिग्री कॉलेज, गाजियाबाद
ईमेलः upasanadikshit1602@gmail.com

प्राप्तिः 26.02.2025
स्वीकृतः 10.03.2025

4

सारांश

काव्य के शिल्प विधान में सामान्यतया चिन्तन का प्रयोगपक्ष प्रधान होता है। प्रयोगधर्मी चिन्तन के फलस्वरूप शिल्प का विधान नये–नये रूप धारण करता हैं। जो शिल्प विधान कवि की भावनाओं, विचारों और अनुभूतियों के प्रयोजन से निर्धारित होता है, उसकी पृष्ठभूमि में एक द्वंद काम करता है परिणाम स्वरूप नूतन अभिव्यक्ति, भाषा, शब्द, वक्तव्य, संरचना, बिम्ब प्रतीक छंद, लय, आदि का नया रूप सामने आता है। शिल्पविधान का रचनात्मक ढंग उन सब का नियमन करता है। काव्य के शिल्प को समझने के लिये सर्वप्रथम कवि की मानसिकता को समझना जरूरी है। मानसिकता को समझे बगैर हम काव्य के व्यापक स्वरूप को सही रूप में समझ नहीं सकते। काव्य पूर्णतया कवि के हृदय और मस्तिष्क के भावों और विचारों का सुन्दर मिश्रण होता है। उसकी अमूर्त अभिव्यक्ति शिल्प की सहायता से मूर्त रूप धारण करती है।

धूमिल काव्य का शिल्प विधान निर्बन्ध और अनूठा प्रयोग है जो अभिव्यक्ति और सृजन की परम्परित प्रणाली को नकारता है। उसके मूल में एक विरोध सक्रिय है, जो काव्य में अनावश्यक कुशलता प्रदर्शन और अर्थ की जटिलता के कारण उपजा हैं। धूमिल का काव्य–आवेग उस ओर बढ़ता है जहाँ सरलता और तकनीक की आसानी है। वे कविता की बौद्धिक दुरूहता के खिलाफ हैं। उनका उद्‌देश्य कविता को जन–जन तक पहुँचाना हैं। ऐसे में किसी काव्य परम्परा और साहित्यिक संस्कार का समर्थन उन्हें सुहाता नहीं है। वे अभिव्यक्ति की स्वंत्रतता तथा चमत्कार रहित सहजता का समर्थन करते हैं। उन्होने कविता को प्रांसगिक बनाने के लिए तथाकथित परम्परित काव्यत्व से छुटकारा दिलाने की कोशिश की है।

प्रस्तावना

शिल्प के विविध पहलुओं पर सोच–विचार कर यह ज्ञात होता है कि धूमिल पुराने तरीकों को त्यागकर नवीन शिल्प विधान के आकर्षण की ओर खिंचते है। उन्होंने परिवर्तन का अनुभव ही नहीं किया अपितु अभिव्यक्ति की आवश्यकता के अनुरूप योजनाबद्ध तरीके से अभिनव शिल्प संधान की आवश्यकता को पूरा किया। कभी पारम्परिक नियमों और अनुशासनों को चुनौती दी, कभी भाषिक स्तर पर चतुर वाक्य संयोजन किया। धूमिल ने भाषा, उपमान और काव्य के विविध रूपों को नये रूप में ग्रहण किया जो उनकी कविताओं का शिल्पगत वैशिष्टय है। काव्यशिल्प के आवश्यक उपादानों के आधार पर धूमिल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन इस अध्याय में प्रस्तुत हैं –

(अ) धूमिल की लम्बी कविताएँ – अभिव्यक्ति का कोई भी माध्यम सार्थक रचनात्मकता की कसौटी पर तभी खरा उतरता है, जब वह अपनी समसामयिक गतिविधियों को समझने, उन्हें, विश्लेषित करके उभारने का प्रमाणिक दस्तावेज बनता है। लम्बी कविता का सृजन भी इसी प्रक्रिया से बंधा है। जीवन दृष्टि की व्यापकता को समेटने का प्रयास ही लम्बी कविता है जिसमें व्यापकता, संघर्ष, व्याप्ति एवं विस्तार दिखाई देता है। दरअसल कविता से कवि सम्बद्ध है और कवि से कविता। जब तक कवि की दृष्टि में चेतना की सघनता छायी रहेगी और पैनी नजर से सत्य को जानने का मार्ग खोजती रहेगी, तब तक कविता के वृहद प्रवाह का अस्तित्व बना रहेगा "जब समकालीन कवि के पास अनुभवों की विषमता और गहराई आ जाती है और रचनाकार पर बाहर–भीतर के अत्यधिक दवाब पड़ते है जिनकी सम्यक् अभिव्यक्ति छोटी कविता में नहीं हो पाती तो उनका अनुभावन लंबी कविता में उतर आता है। कहा जा सकता है कि अपने व्यापक अनुभवों को वृहद फलक पर प्रस्तुत करने के लिए ही लम्बी कविता अपनें अस्तित्व में आयी है।"[1] चूँकि धूमिल की अनुभूति व्यापक एवं गहरी है। उसे लघु कविता में पूर्णतया नत्थी नही किया जा सकता। उनकी विचार श्रृखला एक–दूसरे से ऐसे गुंफित है कि उन्हे पृथक भी नहीं किया जा सकता है। धूमिल में अभिव्यक्ति को लेकर जो तीव्र गतिमयता है, वह समझौता करने पर भी खत्म नहीं होती परिणामस्वरूप लघु कविताएॅ लिखने का सिलसिला छूट जाता है।

लंबी कविताओं में धूमिल ने भाँति–भाँति के अनुभवों का ज्ञान दिया है। इनमें कुछ अनुभव रचनात्मक दृष्टि से बेहद सफल हैं। समसामयिक संदर्भों से जुड़े उनके अनुभव लम्बी कविताओं को सफल बनाते हैं। लम्बी कविताओं में सृजन सम्बन्धी अनुभवों का विस्तृत फैलाव 'संसद से सड़क तक' में देखने को मिलता हैं। इस संग्रह की प्रमुख कविताएं 'राजकमल चौधरी के लिए', 'मोचीराम', 'मुनासिब काररवाई', 'भाषा की रात', 'पटकथा' लम्बी कविताओं की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

धूमिल की इन लम्बी कविताओं के सृजन का आधार मुख्यतः व्यवस्था के प्रति निराशा है। आक्रोश एवं वेदना के कारण उनमें एक आवेग है एक संघर्ष है। बाह्य संघर्ष के साथ–साथ उनके अन्दर का संघर्ष, तीव्र असंतोष और आक्रोश कलात्मक स्तर पर भाषा को तोड़ते–फोड़ते हुए लम्बी कविताओं का सृजन करते हैं। लम्बी कविताओं में धूमिल की रूचि "नये जीवन विधान और यथार्थ बोध को अभिव्यक्ति देने की सृजनात्मक विवशता के परिणामस्वरूप विकसित हुई है। यह एक ऐसा काव्य रूप है जो वर्तमान जीवन की तनावग्रस्त स्थितियों को पूरी शक्ति से अभिव्यक्त करता है। ये कविताऐं आज के यातना ग्रस्त जीवन का सजीव प्रतिबिम्ब हैं, जो आम आदमी की समस्याओं, संघर्षों और उसकी जिन्दगी को अपंग बना देने वाली विकृतियों को अच्छी तरह पहचानती हैं। ये कविताएं आम आदमी के हक और अधिकार की वकालत करती हैं और उसकी शोचनीय दशा के प्रति सहानुभूतिशील भी हैं।"[2] इसीलिये 'पटकथा' में धूमिल के समकालीन अनुभव एक साथ, एक समय पर विभिन्न मोर्चों पर लड़ते है। उनका यह बहुमोर्चीय संघर्ष भावावेश या भावोन्माद नहीं है वरन् एक विराट प्रक्रिया है और लम्बी कविताओं का विस्तार है।

धूमिल अपने एक अनुभव पर एक कविता नहीं लिखते, बल्कि दर्जनों अनुभवों पर एक कविता तैयार करते है। इस प्रकार हम कह सकते है कि अनुभवों का संगठित रूप ही लम्बी कविता है। दूसरा तथ्य यह है कि लम्बी कविताएँ लिखने वाला कवि अपने विचारों से संतुष्ट नहीं होता। उसे लगता है कि कहीं कुछ छूट गया है। इस प्रकार एक विचार से दूसरे विचार की संम्बद्धता स्पष्ट नही हो पाती

और तब तक तीसरा जन्म ले लेता है। इस तरह का वैचारिक द्वंद्व धूमिल की लम्बी कविताओं में दिखाई पड़ता है। उदाहरण के लिए 'मोचीराम' को ही ले लें। 'मोचीराम' में धूमिल की लम्बी विचार श्रृंखला आदमी के अस्तित्व, पहचान, अन्तर्मन की स्थिति, खोखले दंभ, कुटिलता, विवशता, अविश्वास, दब्बूपन और उदासीनता जैसे तमाम बिन्दुओं से होती हुई निष्कर्ष के पड़ाव पर पहुँचती है लेकिन निष्कर्ष की स्थिति भी असमंजस का त्याग नहीं कर पाती अतएव कविता की लंबाई बढ़ती जाती है। ऐसा अनूभूति की प्रबलता के कारण है जिससे कविता निश्चित सीमा रेखाको पार कर जाती है। यह पारस्परिक और आश्रित गयात्मकता ही लंबी कविता को विस्तार प्रदान करती है। एक बात तो साफ है कि लम्बी कविता अपना प्रंबधात्मक शिल्प बुनती है जो परम्परागत प्रबन्धात्मकता के पालन के लिए बाध्य नहीं।

(क) संरचनात्मक गठन में भिन्नता– समीक्षा का नजरिया समर्थित भी होता है और आलोचनात्मक भी। संरचनात्मक जाँच पड़ताल कर विशेष परिणामों तक पहुँचने की प्रक्रिया कितनी सटीक,सम्यक और सार्थक है, इसका पता काव्य के सही मूल्याँकन से लगता है। धूमिल की रचनाओं के संरचनात्मक गठन में भिन्नता है यह बात सही है। इसके पीछे यह तर्क दिया जा सकता है कि वह पंरपरागत शिल्प से छुटकारा पाना चाहते हैं। अनियमित जीवन की कमियों कों अनियमित पद्य में लिखते है। कारण यह भी है कि धूमिल को काव्य की गहन कलात्मकता में सिर धुनना पंसद नहीं। उनकी कविता बोलचाल की शैली को अपनाती है। उनका मानना है कि 'एक सही कविता पहले एक सार्थक वक्तव्य होती है'[3] उनका नया काव्यात्मक मुहावरा गद्य–पद्य के कृत्रिम बॅधन की पहचान मिटाकर सर्जनात्मकता में सक्रिय है। अब वह वक्तव्य हैं, तुक–तान से सर्वथा मुक्त।

धूमिल की कविता आम बोलचाल को संप्रेषणीय भाषा में प्रस्तुत करती है। शायद इसलिए बे हर कविता को 'आजाद ख्याल' मानते हैं। वे शिल्प के आकर्षण से दूर है। उनका कथन हैं, ''ऐसा क्यों है कि ज्यादातर लोग कविता से नहीं, कविता के शिल्प से ऊब जाते है और सवाल जब समूची कविता का बदलने का है, वे महज शिल्प बदल देते हैं, गोया नींद में करवट बदल ली''[4]

धूमिल की कविताओं की संरचनात्मकता थोड़ी भिन्न हैं। कहीं वाक्य की लम्बाई भावों के समावेश के अनुसार हैं, कहीं आवश्यकता से अधिक हैं। कहीं काव्य का प्रवाह एक दो शब्दों पर ही रूक जाता है और कहीं एक अक्षर ही काफी है। उदाहरण के लिए –

''यातायात को रास्ता देती हुई जलती रहेंगी चौरस्तों की बत्तियाँ''[5]

इस प्रयास की आंतरिक संरचना भले ही पुष्ट हो लेकिन ऊपरी संरचना हल्केपन का परिचय देती हैं जैसे –

''नंगी और ठण्डी और काली''[6]

और–

भाषण में जोश है, पानी ही पानी हैं
पर कीचड़ खामोश है''[7]

धूमिल ने कही–कही इस तरह के अटपटे प्रयोग किये है संभवतः नाटकीयता लाने के लिए अथवा नया प्रयोग अपनाने के लिए। लेकिन वे शीघ्र ही व्यर्थ के चमत्कार प्रदर्शन से बाहर आ गये। धूमिल की हर कविता अपनी काव्यानुभूति का संरचना शिल्प अपने साथ लाती है जैसे किसी भी

प्रक्रिया को मुक्त विस्तार के लिए नये परीक्षणों से गुजरना ही पड़ता है वैसे ही भाषिक प्रक्रिया और काव्य प्रक्रिया को मुक्त करने के लिए धूमिल ने यह प्रयोग किए।

(ख) अधूरापन— धूमिल की कविताओं में अधूरेपन की तलाश जारी है। आलोचकों का मानना है कि उनकी कविताएं निष्कर्ष पर पहुँचने से पहलें ही दम तोड़ देती हैं। ऊँट–पंटाग तरीके का क्रमहीन क्रम कविता को पूर्णत्व के बोध से वंचित करता है। अधूरेपन के कारण कविताओं में कलागत कसाव देखने को नही मिलता। डा० अष्टेकर धूमिल को 'अधूरा कवि' सिद्ध करने में तनिक भी देर नहीं करतें। वे कहते है "वह एक ओर तो समानधर्मा–रचनाकारों से अनेक विषयों पर बहस करता ही था साथ–साथ साधारण लोगों में जाकर उनके दुःख–सुखों को सुनता हुआ बड़ा चौकस रहता था। ज्यों ही कोई चमत्कृत करने वाली उक्ति, किसी साधारण जन से सुनता उसे लिख लेता और अपनी किसी–किसी रचना में उसे जड़ देता। इससे उसकी कविता में एक दोष उत्पन्न हुआ–असंम्बद्धता का"।[8] इसका अर्थ यह हुआ कि जब तक पंक्तियों में उचित संबद्धता नहीं है, तब तक अधूरेपन की उपस्थिति अनिवार्य है। सहज ही जेहन में एक बात आती है कि धूमिल ने काव्य में अधूरेपन को स्थान क्यों दिया ? क्या यह सोची समझी योजना का एक हिस्सा है?

मेरा उत्तर यही है कि धूमिल ने काव्य में अधूरापन सायास लाया गया। वास्तविक अर्थ को पूरी तरह स्पष्ट कर देने से काव्य में रहस्यात्मकता नही रहती है। वैसे भी धूमिल के काव्य में अधूरापन अनुभूति से सम्बन्धित है न कथ्य से और न ही शिल्प से बल्कि इस अधूरेपन का प्रयोग पाठक का दिमाग खोलने के लिए किया गया है। पाठकों को सोचने के लिए विवश करना अधूरेपन की सार्थकता है –

"लोहे की छोटी–सी दुकान में बैठा हुआ आदमी
सोना और इतने बड़े खेत में खड़ा आदमी
मिट्टी क्यों हो गया है।"[9]

यह अधूरापन कथ्य की सार्थकता को व्यक्त करता है। सब कुछ स्पष्ट करने से कविता में उतना आकर्षण नहीं रहता, जितना अधूरा छोड़ने पर उत्पन्न हुआ है। धूमिल ने पाठक की बौद्धिकता को पहचाना है। वह जानते है कि उँगली पकड़ कर चलाने के दिन अब नहीं रहे। दिमाग पर थोड़ा जोर डालते ही इन पंक्तियों का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। वह अंतर समझ में आ जाता है जो भ्रष्ट व्यवस्था के कारण उपजा है –

"हत्यारों ने फेंक दिऐ है
सारे शब्द और विचार
उन्होंने हथियार उठा लिए है इस वक्त
इस वक्त तुम्हें तय करना है कि तुम
क्या करोगे?"[10]

अधूरेपन की आड़ में धूमिल की कविता जिस प्रकार व्यवस्था पर प्रहार कर रही है उससे काव्य की धार मुथरी न होकर अधिक पैनी हुई है। धूमिल कविता की संपूर्णता से नहीं, अधूरेपन की पूर्णता से पाठक को जिज्ञासु बना देते हैं। परिस्थितियों में निर्णय लेने का जिम्मा पाठक पर डालकर दूसरी ओर मुड़ जाते है और लिखते हैं –

"सबसे छोटा लड़का भी
तुम्हारे पड़ोसी का गला
अचानक,
अपनी स्लेट से काट सकता हैं।
क्या मैंने गलत कहा?
आखिरकार............आखिरकार..........."[11]

कविताओं को अधूरा छोड़कर धूमिल जिन प्रसंगों का संकेत देते हैं, वे यथार्थ से अनुप्राणित हैं। उनकी कविता न अचानक समाप्त होती हैं, न ही अधूरी छूटती है बल्कि पाठक को वैचारिक द्वंद्व और विचार संघर्ष में छोड़कर आगे बढ़ जाती है। इसे हम पाठक को झटका देने का नुस्खा भी मान सकते हैं।

(ग) फैन्टसी– कल्पना लोक की निर्बाध स्वप्नयात्रा फंतासी है। कल्पना की अतिश्यता इसका विस्तार करती है। फंतासी के द्वारा हम स्वप्न संसार को एक आकार देते है और जीवन जगत का यथार्थ अनुभव करते है। "मनोवैज्ञानिक की दृष्टि से फैन्टसी वह तरीका है, जिसके द्वारा मानव सबसे पहले यथार्थ जगत का अनुभव करता है। उसका अर्थ यह है कि बालक का सहज स्वभाव ही फैन्टसी मूलक होता है। बाद में व्यस्क होने पर यही फैन्टसी 'अचेतन' तत्व बन जाती है और जिस सीमा तक नहीं बन जाती, वहाँ तक उसे अव्यस्कता माना जाता है ————हमारे सामाजिक जीवन के अधिकांश रिश्तों के तल में यही फैन्टसी प्रवाहमान रहती है।"[12] फैन्टसी का आधार काल्पनिक होता है लेकिन धूमिल ने जिस फैन्टसी का अपनाया, वह वास्तविकता का पुट लेकर यथार्थ से अनुप्राणित है।

"फैन्टसी सदा अनुभवात्मक और अर्थवती होती है। यहाँ तक कि अगर व्यक्ति समझदारी के नाम पर नासमझी बरतता हुआ इससे अपने को विच्छिन्न नहीं कर लेता तो यह जीवन–जगत के सम्बन्ध में सम्बन्धमूलक भी होती है।"[13] धूमिल के काव्य में फैन्टसी के उदाहरण बड़े गतिशील हैं। उनमें बिंब और प्रतीक समान रूप से गुँथे हुए है। 'राजकमल चौधरी के लिए' कविता में भिन्न प्रकार का फैन्टसी प्रयोग देखा जा सकता है –

"अस्पताल की अर्न्तधाराओं और नर्सों का
सामुद्रिक सीखने के बाद
'स्वप्न–सुखद हो' छाप तकियों की फाड़कर
मैं
मृत्यु और मृत्यु नहीं के बीच की सरल रेखा
तलाश करता हूँ मगर वहाँ
सिर्फ चूहों की लेड़ियों
बिनौलों और स्वप्नभंग की आतुर मुद्राओं की
मौसमी नुमाइश है

....

उसकी तस्वीर के नीचे' स्वर्गीय लिखकर

फूलदान की बगल में
बुद्धिमानों का अंधापन और अंधों का विवेक
मापने के लिए
सफेद पालतू बिल्ली
अपने पंजों के नीचे से कुछ शब्द
काढ़ रख देती है।" [14]

धूमिल का यह फैन्टसी प्रयोग अर्थहीन नहीं है। वे 'राजकमल चौधरी' के विवादास्पद लेखन की त्रासद दुनियाँ खोलकर सामने रखते हैं।

धूमिल ने पटकथा में फैन्टसी और यथार्थ का मिला जुला संयोजन प्रस्तुत किया। इस कविता में हिन्दुस्तान का चित्र अचेतन मन मस्तिष्क से संयुक्त फैन्टसी से निर्मित है लेकिन उसकी आंतरिक चेतना यथार्थ का प्रतिरूप है। फैन्टसी के तानों बानों से संकल्पित यह बेहतरीन उदाहरण प्रस्तुत है–

"मैं हिन्दुस्तान हूँ

……

(मुझे ठीक–ठीक याद नहीं है। मैने यह
किसकों कहा था)

……

मेरी नींद टूट चुकी थी
मेरा पूरा जिस्म पसीने में
सराबोर था। मेरे आस–पास से
तरह–तरह के लोग गुजर रहे थे।
हर तरफ हलचल थी, शोर था।
कुछ लोग कह रहे थे कि इन दिनों
एक खास परिवर्तन हुआ है
जनता जगी है। सब प्रभु की माया है
एक लम्बे इंतजार के बाद
चीजों का असली चेहरा
उजाले में आया है

……

मैने भी अपने भीतर
(कहीं बहुत गहरे)
'कुछ जलता हुआ–सा' छुआ है" [15]

धूमिल के लिए फैन्टसी चमत्कार उत्पन्न करने वाली जादू की पुड़िया नहीं है। वह शक्ति है जो जीवन्त विषयों के प्रत्यक्षीकरण का योग बनाती है। भावों और विचारों के एकीकरण का मौलिक और उपयोगी मानसिक आधार तय करती है। फैन्टसी में बिखरे हुए अनुभवों की जटिलता को व्यक्त किया जाता है। इस प्रकार यह फैन्टसी सचेतन मन द्वारा एकत्रित अनुभवों को अनुशासित रिश्ते में स्थापित करती हैं।

(घ) यथार्थ बोध –यथार्थ अनुभवों के प्रति धूमिल की अटूट निष्ठा है। वे जीवन की असलियत को कल्पना के आवरण से नहीं ढकतें। उनकी कविताओं में यथार्थ के कटु अनुभव अनुभूति की तीव्रता के साथ व्यंजित होते है। यथार्थ उनकी अग्रिम विशिष्टता है। कल्पना भ्रमण के फेर में न पकड़कर वे यथार्थ को अंगीकार करते हैं। विगत में न डूबकर वर्तमान को निहारते हैं। "यथार्थवाद मानव संदर्भ में अस्तित्व और क्षय के बीच,दर्शन संदर्भ में सत्ता और बोध, के बीच तथा इतिहास संदर्भ में वंचना और उपलब्धि के बीच द्वंद्वात्मक सम्बन्ध देखता है।"[16] यथार्थवादी दृष्टि सामाजिक विसंगतियों की खाज–खुजली पर नीम की कड़वाहट का काम करती है। व्याधियों पर कड़वी औषधि का प्रयोग जरूरी है। समाज में फैलती कड़वाहट का यथार्थवादी भेदन धूमिल के काव्य क्षेत्र को अधिक ऊर्जा और स्फूर्ति देता है। जिस प्रकार "यथार्थ जीवन की वह आस्थामयी अनुभूति है जो मानती है कि जीवन निस्सार नहीं, जीने के लिए है, उसे जिया जा सकता है, भोगा जा सकता है और उसके साथ मनुष्य होकर मनुष्य के स्तर पर अनुभूतियों को ग्रहण किया जा सकता है।"[17] उसी प्रकार यथार्थ धूमिल के लिए अन्तर्मन का आभास है।

सामाजिक विषमता का मूल स्त्रोत पूँजीवादी सभ्यता है। धूमिल का विश्वास है कि इसी कारण समाज में असंगतियाँ जन्मी है। पूँजीपतियों के अत्याचारों से दरकी जमीन को टटोलते हुए धूमिल लिखते हैं –

"सोच में डूबे हुऐ चेहरों और
वहाँ दरकी हुयी जमीन में
कोई फर्क नहीं है
वहाँ कोई सपना नहीं है। न भेड़िये का डर

....

खाये जाने लायक कुछ भी शेष नहीं है

....

और अब ....सच को भी सबूत के बिना
बचा पाना मुश्किल है"[18]

धूमिल यथार्थ की द्वंदमूलक गतिशीलता को और प्रवाह देते हैं –

"मरा हुआ आदमी सिर्फ भुखमरी का पैमाना हो गया है"[19]

उनकी कविता का यथार्थमुक्त है जो माँग करता है –

"मैं सहज होना चाहता हूँ
ताकि आम को आम
और चाकू को चाकू कह सकूँ।" [20]

धूमिल ने यथार्थ को लिजलिजी मानसिकता से नहीं अपनाया। उनके लिए यथार्थ सच्चाई का वह रास्ता है कि जिसकी सीमा में जो भी आया, धूमिल ने उसी को अभिव्यक्ति दी –

"शाब्बास! हिम्मत से डटे रहों
भूख कभी गाली नहीं होतीऔर पेट का नंगापन नंगई नहीं है" [21]

धूमिल के काव्य की ठोस, यथार्थपरक पृष्ठभूमि अन्वेषण की प्रयोग भूमि लगती है जिसमें प्रत्येक प्रकार की मानसिकता का परीक्षण किया गया है। धनी–निर्धन, सम्पन्न–विपन्न, मालिक–मजदूर, कुटिल–सरस, गूँगे–वाचाल, स्त्री–पुरूष सभी समान रूप से जाँचे और परखे गये है। इन रूपों में जिसकों जैसा देखा, व्यक्त कर दिया –

"वर्षा के इस दादुर–शोर में
मैने देखा हर तरफ

……

गिरगिट की तरह रंग बदलते हुए

……

हर तरफ तरह–तरह के जन्तु हैं
श्रीमान किन्तु हैं
मिस्टर परन्तु हैं
कुछ रोगी हैं
कुछ भोगी हैं
कुछ हिजड़े हैं
कुछ जोगी हैं।" [22]

निष्कर्ष

मानव स्वभाव की ऐसी यथार्थवादी पहचान धूमिल ही कर सकते हैं। उनका यह अनुभव शत–प्रतिशत सत्य का बोध कराता है। यथार्थ को समझने का उनका ढंग अलग है जिसमें अमूर्त को मूर्त बनाने का प्रयास हैं।

धूमिल का काव्य यथार्थ का विस्तार है। जिसका मुख्य बल जीवन के बहुस्तरीय, बहुआयामी स्व रूप के विस्तार पर है। इस विस्तार में अराजकता के खिलाफ संघर्ष है और भ्रष्ट व्यवस्था के विरूद्ध सुलगती आग का दर्शन है।

1. विनय अश्विनी पाराशर–समकालीन हिन्दी कविता संवाद पृ० सं०–91
2. मंजु गुप्ता–हिन्दी नई कविता का सौंदर्य शास्त्रीय अध्ययन पृ० सं०–245
3. धूमिल–संसद से सड़क तक, प्रारम्भिक
4. धूमिल–कल सुनना मुझे, भूमिका पृ० सं०–1
5. धूमिल–संसद से सड़क तक, जनतंत्र के सूर्योदय में पृ० सं०–12

6. धूमिल– संसद से सड़क तक, भाषा की रात, पृ० सं०–90
7. धूमिल– संसद से सड़क तक, पटकथा पृ० सं०–125
8. ग0 तु0 अष्टेकर– कटघरे का कवि धूमिल पृ० सं०–44
9. धूमिल– सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र हरितक्रांति पृ० सं०–88
10. धूमिल– सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र, हत्यारें (दो) पृ० सं०–97
11. धूमिल– संसद से सड़क तक, नक्सलबाड़ी पृ० सं०–69
12. रोहिताश्व–नई कविता : संप्रेषण की समस्या पृ० सं०–70–71
13. रोहिताश्व– नई कविता : संप्रेषण की समस्या पृ० सं०–71
14. धूमिल– संसद से सड़क तक, राजकमल चौधरी के लिये पृ० सं०–31–32
15. धूमिल– संसद से सड़क तक, पटकथा पृ० सं०–123
16. सतीश जमाली– समकालीन साहित्य : नया परिदृष्य पृ० सं०–55
17. लक्ष्मीकांत वर्मा– नई कविता के प्रतिमान पृ० सं०–103
18. धूमिल– कल सुनना मुझे, खेबली पृ० सं०–58
19. धूमिल– सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र, सूखे की छायायें और एक शिशिर संध्या पृ० सं०–36
20. धूमिल– सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र, मै सहज होना चाहता हूँ पृ० सं०–61
21. धूमिल– सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र, मेरा गॉव पृ० सं०–63
22. धूमिल– संसद से सड़क तक, पटकथा पृ० सं०–117–118